THE STUDY
An Institute for IAS

विश्व इतिहास

मणिकांत सिंह

विषय सूची

क्र. सं.	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	विश्व इतिहास-एक अन्तर्यात्रा	01
2.	पुनर्जागरण	11
3.	प्रबोधन एवं आधुनिक विचारक	19
4.	यूरोपीय राज्य पद्धति	26
5.	अमेरिकी क्रांति, अमेरिकी संविधान एवं अमेरिकी गृहयुद्ध	37
6.	फ्रांस की क्रांति	57
7.	फ्रांस और यूरोपः 1815 के पश्चात्	77
8.	औद्योगिक क्रांति एवं ब्रिटिश लोकतांत्रिक राजनीति	111
9.	समाजवाद	134
10.	उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद	144
11.	प्रथम विश्व युद्ध	159
12.	रूस की क्रांति	178
13.	आर्थिक मंदी	192
14.	अरब राष्ट्रवाद का उदय एवं तेल साम्राज्य	196
15.	फासीवाद और नाजीवाद	200
16.	द्वितीय विश्वयुद्ध	216
17.	चीनी राष्ट्रीयता एवं साम्यवाद	224
18.	संयुक्त राष्ट्र संघ	233
19.	शीत युद्ध	236
20.	तृतीय विश्व का उद्भव	256
21.	गुटनिरपेक्षता	258
22.	विउपनिवेशीकरण	261
23.	वियतनाम या 'इण्डोचीन'	268
24.	अफ्रीका-मिस्र	271
25.	लैटिन अमेरिका	274
26.	अफ्रीका और लैटिन अमेरिका विकास में बाधाएँ	276
27.	दक्षिण अफ्रीका रंगभेद से प्रजातंत्र तक	280
28.	विश्व युद्धोत्तर यूरोप में नाटो तथा यूरोपीय समुदाय का गठन-यूरोपीय यूनियन	283
29.	पूर्वी यूरोप के देशों में राजनीतिक परिवर्तन	288
30.	सोवियत संघ का विघटन	292
31.	भूमंडलीकरण	296
32.	विश्व इतिहास एक : विहंगम दृष्टिकोण	301
33.	विश्व इतिहास-एक विश्लेषण	327

अध्याय 1

विश्व इतिहास-एक अन्तर्यात्रा

इतिहास (मुख्य परीक्षा) में बहुत बड़ा अंश विश्व इतिहास का होता है। यद्यपि तकनीकी दृष्टि से यह इतिहास विषय का महज एक-चौथाई अंश है परन्तु व्यवहार में यह खण्ड अंकों के स्तर को बहुत हद तक प्रभावित करता है। इतिहास (मुख्य परीक्षा) में शामिल होने वाले अधिकांश छात्रों की शिकायत होती है कि विश्व इतिहास में उनका अच्छा परफॉर्मेन्स नहीं हो सका। आखिर ऐसा क्यों? ऐसा इसलिए कि वे विश्व इतिहास में वह आत्मविश्वास विकसित नहीं कर पाते, जो वे भारतीय इतिहास में कर चुके होते हैं और इसकी वजह है अध्ययन का अवैज्ञानिक तरीका। वस्तुत: विश्व इतिहास का पाठ्यक्रम आधुनिक काल से प्रारम्भ होता है जबकि भारतीय इतिहास का सिन्धु सभ्यता एवं वैदिक सभ्यता से ही। विश्व इतिहास के साथ पहली सीमा यहीं बँध जाती है। विश्व इतिहास के पाठ्यक्रम में अधिकांश अंश यूरोपीय इतिहास का है। यूरोपीय इतिहास का पाठ्यक्रम भौगोलिक अन्वेषण एवं पुनर्जागरण से प्रारम्भ होता है। अत: प्राचीन एवं मध्यकालीन यूरोप का इतिहास अधिकांश छात्रों को अज्ञात होता है। यही वजह है कि उन्हें विश्व इतिहास से जुड़ने में कठिनाई होती है। दूसरे, कुछ छात्रों में चयनात्मक अध्ययन (Selective Study) की प्रवृत्ति होती है। इस चयनात्मक अध्ययन के क्रम में या तो वे सभी ग्रुप से कुछ महत्वपूर्ण टॉपिक का चयन कर लेते हैं या फिर एक या दो ग्रुप का ही चयन कर लेते हैं। यद्यपि चयनात्मक अध्ययन आवश्यक है क्योंकि बेहतर अंक प्राप्त करने के लिए व्यावहारिक नजरिया अपनाना जरुरी है। सारे टॉपिक पर एक समान बल देना संभव नहीं होता। परन्तु इस प्रकार की युक्ति परवर्ती चरण में ही उपयुक्त है। तैयारी के प्रारम्भिक चरण में संपूर्ण पाठ्यक्रम का संक्षिप्त ज्ञान आवश्यक है। वह इसलिए कि अगर प्रारम्भ में आप चयनित अध्ययन की ओर उन्मुख हो जाते हैं तो आपको निम्नलिखित कठिनाईयों का सामना करना पड़ सकता है- प्रथम, विषय-वस्तु में आपकी दिलचस्पी उत्पन्न नहीं हो सकेगी, जबकि विषय-वस्तु पर गहरी पकड़ स्थापित करने के लिए दिलचस्पी का होना पहली शर्त होती है। दूसरे, आप में आत्मविश्वास जागृत नहीं हो सकेगा और विश्व इतिहास के प्रश्नों को हल करने के मुद्दे पर आपके मन में हमेशा अनिश्चितता और घबराहट का भाव बना रहेगा। तीसरे, विशेषकर संघीय सिविल सेवा परीक्षा में (यद्यपि इधर राज्य सेवा में भी यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है) प्रश्नों की प्रकृति इस तरह की होती है कि समग्रता में ही उन्हें समझा और लिखा जा सकता है। उदाहरण के लिए 'एक कलान्त और भीरु पीढ़ी के लिए मेटरनिख ही उचित व्यक्ति था।' यहाँ मेटरनिख की भूमिका को युगीन भौतिक-वैचारिक परिवर्तन के क्रम में ही देखा और परखा जा सकता है। वैसे भी विश्व इतिहास के विभिन्न टॉपिक में एक आन्तरिक सहलग्नता (Internal linkage) विद्यमान है। अत: एक समग्र दृष्टि के विकास के लिए इनके आन्तरिक संबंधों को समझना आवश्यक है।

विश्व इतिहास का पाठ्यक्रम पुनर्जागरण से आरम्भ होता है। चूंकि अभ्यर्थियों को पुनर्जागरण से पूर्व की घटनाओं की जानकारी नहीं होती, अत: उन्हें पुनर्जागरण के वास्तविक स्वरूप को समझने में अत्यधिक परेशानी होती है। उनकी सुविधाओं को ध्यान में रखकर यहाँ प्राचीन तथा मध्यकालीन यूरोप से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं से परिचय कराया जा रहा है। किन्तु यहाँ हमारा उद्देश्य घटनाओं की सिर्फ संक्षिप्त झलक भर देना है। घटनाओं का आलोचनात्मक परीक्षण अथवा विश्लेषण करने का अवकाश हमें नहीं है चूंकि यह टॉपिक विश्व इतिहास के पाठ्यक्रम से बाहर है। अब हम प्राचीन यूरोप की यह कहानी प्राचीन यूनान से ही आरम्भ करेंगे।

प्राचीन यूनान का क्षेत्र दक्षिणी-पूर्वी यूरोप था और एजियन सागर उसे एशिया माईनर के क्षेत्र से पृथक करता था। भौगोलिक कारक एवं जनजातीय चरित्र के कारण प्राचीन यूनान में नगर राज्यों का उद्भव हुआ। इन नगर राज्यों में एथेंस, स्पार्टा, कोरिंथ और थीब प्रमुख थे। आगे एथेंस ने साईरस और डेरियस के अन्तर्गत बढ़ते हुए ईरानी साम्राज्यवाद का सफलतापूर्वक सामना किया। फिर, एथेंस एवं स्पार्टा के बीच आपसी शत्रुता एवं नगर-राज्यों के बीच आन्तरिक कलह के कारण इन नगर-राज्यों का पतन हो गया। इन नगर-राज्यों के आन्तरिक विवाद से लाभ उठाकर मकदूनिया के शासक फिलिप ने इन पर हमला कर दिया और स्पार्टा को छोड़कर इन सभी को जीत लिया। 336 ई.पू. में उसका उत्तराधिकारी उसका 20 वर्षीय पुत्र सिकन्दर हुआ। उसके नेतृत्व में मकदूनिया का व्यापक विस्तार हुआ। उसने निरन्तर तीन युद्धों में फारस को पराजित किया तथा उसने फोयनिशियन नगर एवं मिस्र पर कब्जा कर लिया। तत्पश्चात् वह भारत की ओर बढ़ा तथा व्यास नदी तक प्रसार किया। फिर उसकी सेना ने आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया। वह वापस लौट गया और वापस लौटते हुए 323 ई.पू. में 33 वर्ष की अवस्था में बेबीलोन में उसकी मृत्यु

कर दिया और स्वयं को शासक घोषित कर दिया। पोप ने उसे मान्यता प्रदान की क्योंकि पोप को लोम्बार्डों के विरुद्ध पेपिन की मदद् की जरुरत थी। लोम्बार्ड रोम पर अपना कब्जा जमाना चाहते थे। पेपिन ने इन आक्रमणकारियों को खदेड़ दिया और पोप को उपहार के रूप में वह क्षेत्र, जो उसने आक्रमणकारियों से जीता था, प्रदान किया। इस तरह इटली में पोप के राज्य की स्थापना हुई। कैरोलिंजियन वंश का सबसे महत्वपूर्ण शासक पेपिन का पुत्र, शार्लमा (768-814 ई.) था। वह महान् विजेता और साम्राज्यवादी था। उसने लगभग पचास युद्ध लड़े और इस तरह अपनी शक्ति एवं सत्ता का प्रसार किया। उसके शासन के अंतिम काल में उसके साम्राज्य का प्रसार फ्राँस के अलावा बेल्जियम, स्विट्जरलैंड, हॉलैंड, उत्तरी स्पेन, पश्चिमी जर्मनी और उत्तरी इटली तक हो गया।

अर्थव्यवस्था

यह काल यूरोप के लिए आर्थिक अवनति का काल रहा था, परन्तु इस बात को वैश्विक संदर्भ में नहीं लागू किया जा सकता।

- यूरोप की अर्थव्यवस्था– रोमन साम्राज्य के विघटन के पश्चात् तथा इस्लामी शक्ति के उद्भव के कारण महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों पर यूरोप का नियंत्रण समाप्त हो चुका था। भूमध्य सागर का जुड़ाव अरब सागर से नहीं रह गया था। जेरूशलम, साइप्रस, माल्टा और जिब्राल्टर इन सभी क्षेत्रों पर मुस्लिम शक्ति का कब्जा हो गया था।
- यूरोप में दूरवर्ती व्यापार तथा नगरीकरण को धक्का लगा था और एक प्रकार की क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था कायम हो गयी थी। अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व बढ़ गया था तथा कृषि के क्षेत्र में सामंती संबंध कायम हो गये थे। इसे मेनर प्रणाली अथवा कृषि दासता का नाम दिया जाता है। इसे निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है–
- मेनर प्रणाली के तहत किसानों को भूमि से बाँध दिया जाता था और संपूर्ण उत्पादन प्रक्रिया पर भूमिधारी वर्ग का नियंत्रण होता था। भूमि को प्राय: दो भागों में बाँट दिया जाता था– डिमेन्स भूमि और मेन्स भूमि।
- मेन्स भूमि रैय्यत किसानों को अपने उपभोग के लिये दी जाती थी, बदले में उन्हें डिमेन्स भूमि पर मुफ्त में सेवा देनी होती थी। वे अपने श्रम को बाजार में नहीं बेच सकते थे।

वैश्विक अर्थव्यवस्था

- परंतु यह वह काल था जब इस्लामी साम्राज्य के अंतर्गत एक वैश्विक अर्थव्यवस्था कायम हो गयी थी। वस्तुत: अरब क्षेत्र व्यापार के लिए जाना जाता था, इसलिए आरंभ से ही इस्लाम का रूझान महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों एवं व्यापारिक केन्द्रों पर कब्जा करने पर रहा था। इस्लाम ने मिस्र और ईरान पर कब्जा कर लाल सागर और फारस की खाड़ी दोनों ही मार्गों पर नियंत्रण स्थापित कर लिया, फिर अरब सागर से लेकर हिन्द महासागर और पूरब में बंगाल की खाड़ी तथा मलक्का पर मुस्लिम व्यापारियों का नियंत्रण था। मुस्लिम व्यापारी पश्चिम में जिब्राल्टर से लेकर पूरब में श्रीलंका तक व्यापारियों और जहाजों को सुरक्षा प्रदान करते थे। सामुद्रिक व्यापार पर अरब व्यापारियों का वर्चस्व था।

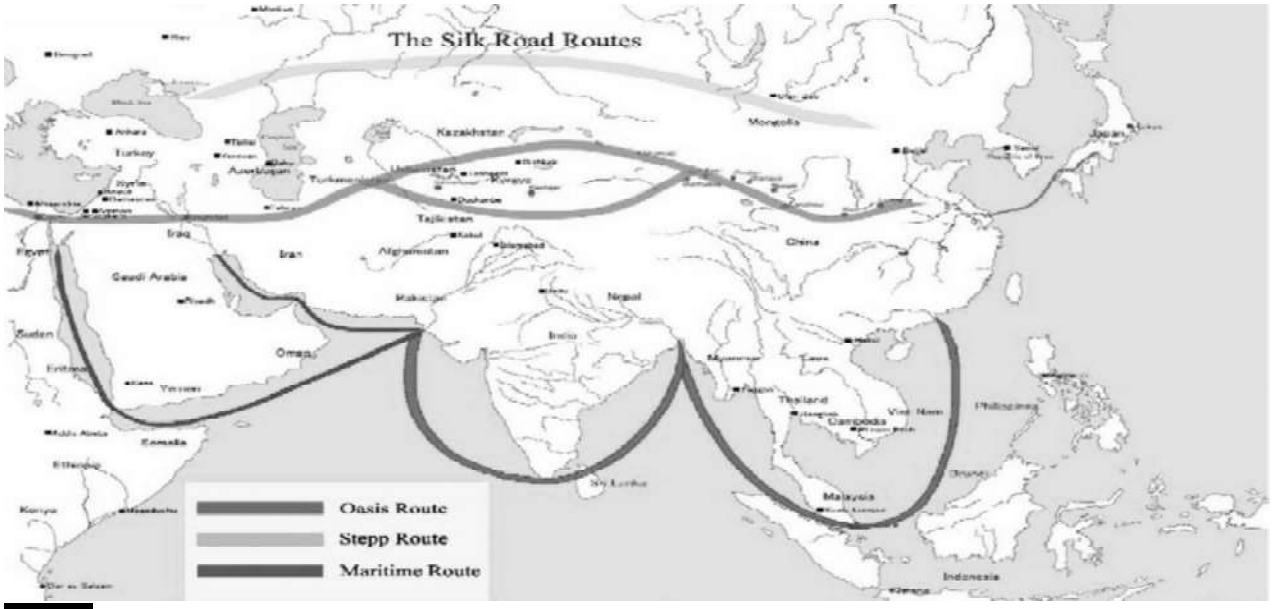

अध्याय 8

औद्योगिक क्रांति एवं ब्रिटिश लोकतांत्रिक राजनीति

19वीं सदी में ब्रिटेन की उन्नति औद्योगिक क्रांति का परिणाम थी। औद्योगिक क्रांति (1780-1850) उत्पादन की पद्धति में एक मूलभूत परिवर्तन को रेखांकित करती है। औद्योगिक क्रांति ने मानव पर मशीन की सर्वोच्चता स्थापित कर दी। इसके साथ घरेलू उद्योगों का स्थान फैक्ट्री प्रणाली ने लिया। यह एक द्रुत औद्योगिक परिवर्तन का काल था, जिसमें अर्थव्यवस्था एवं समाज का संरचनात्मक परिवर्तन भी हुआ। पूँजी के उत्पादक निवेश में वृद्धि, सामाजिक परिवर्तन, घरेलू बाजार एवं विश्व बाजार में वस्तओं की माँग में वृद्धि, साथ ही तकनीकी नवीनीकरण ने इस वृद्धि को संभव बनाया। अब ब्रिटिश आर्थिक जीवन का आधार कृषि के बदले उद्योग हो गया।

ब्रिटेन में औद्योगिक क्रांति

ब्रिटेन में 1760 से 1820 ई. के बीच के काल को 'औद्योगिक क्रांति' का नाम दिया गया। बताया जाता है कि इस काल में ब्रिटेन का चेहरा परिवर्तित हो गया। यह विवाद का विषय है कि इस काल को औद्योगिक क्रांति की संज्ञा दी जाए अथवा नहीं। 1970 के दशक तक इतिहासकार 'औद्योगिक क्रांति' शब्द का प्रयोग ब्रिटेन में 1780 के दशक से 1820 के दशक के बीच हुए औद्योगिक विकास एवं विस्तार के लिए करते थे। परंतु उसके बाद इस शब्द के प्रयोग को अनेक आधारों पर चुनौती दी जाने लगी। वस्तुतः औद्योगीकरण की प्रक्रिया इतनी धीमी गति से होती रही कि इसे क्रांति कहना उचित नहीं माना गया। उन्नीसवीं शताब्दी शुरू होने के काफी समय बाद तक भी इंग्लैंड के बड़े-बड़े क्षेत्रों में कोई फैक्ट्रियाँ या खानें नहीं थीं, इसलिए 'औद्योगिक क्रांति' शब्द अनुपयुक्त समझा गया। साथ ही इंग्लैंड में परिवर्तन कुछ खास क्षेत्रों में ही देखा गया। उदाहरण के लिए, प्रमुख रूप से लंदन, मैनचेस्टर, बर्मिंघम या न्यूकासल नगरों के चारों ओर, न कि संपूर्ण देश में। इसके अतिरिक्त प्रौद्योगिकी बदलाव की गति धीमी थी। नई तकनीकी महँगी थी इसलिए व्यापारी एवं सौदागर उसके प्रयोग से हिचकते थे। कपड़ा उद्योग एक गतिशील उद्योग था, परंतु उसके उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा कारखानों में नहीं, बल्कि घरेलू इकाईयों में होता था।

औद्योगिक क्रांति जैसे मुहावरे का सबसे आरंभिक प्रयोग एक फ्रांसीसी समाजवादी चिंतक जे०ए० ब्लांकी ने किया था। उसके अनुसार 18वीं एवं 19वीं सदी का औद्योगीकरण निश्चय ही क्रांतिकारी था तथा यह एक नयी सभ्यता के आरंभ का सूचक था। किंतु दूसरी तरफ एक ब्रिटिश चिंतक अर्नोल्ड टायनबी ने औद्योगिक क्रांति को आर्थिक-सामाजिक परिवर्तन माना, न कि क्रांति। परंतु उपर्युक्त मत के बावजूद भी 'औद्योगिक क्रांति' शब्द का धड़ल्ले से प्रयोग होता रहा है।

औद्योगिक क्रांति के कारण

1. **ब्रिटेन की राजनीतिक एकताः-** ब्रिटेन सत्रहवीं सदी में राजनीतिक दृष्टि से सुदृढ़ एवं संतुलित रहा था। उसके तीनों हिस्सों-इंग्लैंड, वेल्स और स्कॉटलैंड पर एक ही राजतंत्र यानी सम्राट का एकछत्र शासन रहा था। इसके परिणामस्वरूप संपूर्ण राज्य में एक ही कानून व्यवस्था, एक ही सिक्का (मुद्रा प्रणाली) और एक ही बाजार व्यवस्था थी।
2. **कृषि अर्थव्यवस्था में सुधारः-** 18वीं शताब्दी में ब्रिटेन बड़े आर्थिक परिवर्तन की दौर से गुजरा था। इसे कृषि क्रांति की संज्ञा दी गई। यह एक ऐसी प्रक्रिया थी जिसके द्वारा बड़े-बड़े जमींदारों ने अपनी ही संपत्तियों के आस-पास छोटे-छोटे खेत खरीद लिए और गाँव की सार्वजनिक जमीनों को घेर लिया। इस प्रकार उन्होंने अपनी बड़ी-बड़ी भूसंपदाएं बना लीं। इससे खाद्य उत्पादन में वृद्धि हुई। इससे भूमिहीन किसानों और गाँव की सार्वजनिक जमीनों पर पशु चराने वाले चरवाहों एवं पशुपालकों को कहीं और काम तलाशने के लिए मजबूर होना पड़ा। उनमें से अधिकांश लोग आस-पास के शहरों में चले गए।
3. **समुद्र से निकटताः-** ब्रिटेन उत्तरी अटलांटिक महासागर के निकट अवस्थित था। 18वीं शताब्दी के आगमन के काल तक अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का केंद्र इटली तथा फ्रांस के भूमध्यसागरीय बंदरगाहों से हटकर हॉलैंड और ब्रिटेन के अटलांटिक पत्तनों पर आ गया था।
4. **वित्तीय व्यवस्था का विकासः-** लंदन ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में ऋण प्राप्ति के स्रोत के रूप में एमस्टर्डम का स्थान ले लिया। देश की वित्तीय प्रणाली का केंद्र, बैंक ऑफ इंग्लैंड था। इसकी स्थापना 1694 ई. में हुई। 1784 ई. तक इंग्लैंड में कुल मिलाकर एक सौ से अधिक प्रांतीय बैंक थे और अगले दस वर्षों में इसकी संख्या बढ़कर तीन गुनी हो गई।
5. **यातायात व्यवस्था का विकासः-** 18वीं सदी में पक्की सड़कों एवं नहरों के विकास के कारण यातायात व्यवस्था सुगम

अध्याय 11

प्रथम विश्व युद्ध

प्रथम विश्वयुद्ध के कारक

प्रथम विश्वयुद्ध संधियों एवं प्रतिसंधियों का त्रासद परिणाम था। राष्ट्रवाद, साम्राज्यवाद एवं सैन्यीकरण की नीति ने प्रथम विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि तैयार कर दी, जिसमें पारस्परिक संदेह एवं भय ने अपने ढंग से योगदान दिया।

राजनीतिक कारक

अगर अनेक तथ्यों की बजाए सिर्फ फ्रैंकफर्ट की संधि को देखें तो प्रथम विश्व युद्ध के कारण इसी संधि में निहित थे। इस संधि के द्वारा जर्मनी ने फ्रांस से ऐल्सस एवं लॅरेन का क्षेत्र छीन लिया। फ्रांस के लिए यह राष्ट्रीय अपमान की बात थी। बिस्मार्क इस बात से अवगत था कि फ्रांस कभी भी अपने इस राष्ट्रीय अपमान को धोने का प्रयास करेगा। अत: उसने फ्रांस को यूरोपीय मंच पर अलग-थलग कर देना चाहा ताकि भविष्य में भी फ्रांस प्रतिशोध लेने की स्थिति में न आ सके। बिस्मार्क की इसी चिंता ने संधि प्रणाली को जन्म दिया। उसने 1873 में तीन सम्राटों का संघ बनाया। इसमें जर्मनी, ऑस्ट्रिया एवं रूस के शासनाध्यक्ष शामिल थे। बिस्मार्क की सबसे बड़ी समस्या यह थी कि रूस एवं ऑस्ट्रिया को एक मंच पर कैसे रखा जाए, क्योंकि बाल्कन क्षेत्र में दोनों के हित परस्पर टकरा रहे थे। जैसाकि हम जानते हैं 1878 के बर्लिन कांग्रेस में बिस्मार्क का झुकाव ऑस्ट्रिया की ओर हो गया और उसने ऑस्ट्रिया को बोस्निया एवं हर्जेगोविना पर संरक्षण दे दिया। स्वाभाविक रूप से रूसी भावना को ठेस लगी एवं जर्मनी की ओर से वह उदासीन हो गया। 1879 में जर्मनी एवं ऑस्ट्रिया के बीच संधि हुई; जिसके तहत अगर कोई तीसरी शक्ति एक पर आक्रमण करती है तो दूसरा उसकी सहायता करेगा।

अब बिस्मार्क का ध्यान इटली की ओर गया एवं उसने इटली को मित्रमंडली में शामिल करना चाहा। किंतु इटली, जर्मनी एवं फ्रांस के बीच विभाजित था। अत: बिस्मार्क को यह अवसर तब मिला जब फ्रांस ने ट्यूनीशिया पर कब्जा कर लिया। इटली फ्रांस से नाराज होकर बिस्मार्क के खेमे में आ गया। अब 1882 ई. में जर्मनी ऑस्ट्रिया एवं इटली के बीच त्रिगुट संधि हुई। दूसरी तरफ बिस्मार्क यह भी नहीं चाहता था कि रूस फ्रांस के खेमे में चला जाए। अत: उसने रूस के साथ 1887 ई. में पुनर्आश्वासन की संधि की। किंतु 1888 ई. के बाद जर्मनी के नए शासक विलियम द्वितीय ने बिस्मार्क की नीतियों को उलट दिया एवं रूस की अवहेलना करनी शुरू कर दी, इससे निराश होकर 1890 ई. में बिस्मार्क ने त्याग-पत्र दे दिया।

दूसरी तरफ, जर्मनी की नीतियों के कारण रूस, फ्रांस के नजदीक आता जा रहा था। फ्रांस ने रूस में पूँजी निवेश करना शुरू किया। अत: दोनों के हित परस्पर जुड़ने लगे। 1894 ई. में रूस एवं फ्रांस के बीच संधि हुई। अब इंग्लैंड स्वयं को अलग-थलग महसूस करने लगा था। दूसरी तरफ विलियम द्वितीय ने भी अपनी नीतियों के कारण इंग्लैंड को क्षुब्ध कर दिया। विलियम द्वितीय ने नौसेना के क्षेत्र में इंग्लैंड को चुनौती देनी शुरू कर दी थी। अत: इंग्लैंड, फ्रांस के समीप आने लगा एवं 1904 में दोनों के बीच संधि हुई। अब रूस के साथ भी इंग्लैंड की संधि अनिवार्य हो गयी। फ्रांस एवं रूस आपस में मित्र थे, परन्तु एशिया क्षेत्र में इंग्लैंड एवं रूस के हित टकराते थे। इंग्लैंड, तिब्बत एवं अफगानिस्तान में अपने पाँव जमाना चाहता था। 1905 ई. में जापान से पराजित होने के बाद रूस ने इंग्लैंड की ओर देखा। उसने इंग्लैंड के प्रति अपनी दृष्टि परिवर्तित की। परिणामत: 1907 ई. में फ्रांस . इंग्लैंड एवं रूस को मिलाकर त्रिगुट (Triple Entente) का गठन हुआ।

इस तरह 20वीं सदी के प्रथम दशक तक यूरोप में कूटनीतिक आंदोलन हो चुका था एवं यूरोपीय शक्तियाँ दो गुटों में बँट चुकी थीं। किंतु कुल मिलाकर यह गुट रक्षात्मक ही था। दोनों की शक्तियाँ लगभग बराबर थीं एवं दोनों में से कोई भी गुट युद्ध की ओर पहल करने हेतु तैयार न था। दोनों गुट इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि जो भी युद्ध होगा वह लंबा एवं विनाशक होगा एवं युद्धरत राष्ट्र को काफी धैर्य एवं सहनशक्ति की आवश्यकता होगी। अत: दोनों ने अपनी विशिष्टता बनाए रखने के लिए सैन्यीकरण पर अत्यधिक बल देना शुरू कर दिया, ताकि वह दूसरे गुट से ज्यादा शक्तिशाली हो जाए। अब इस सैन्यीकरण ने दो प्रकार के प्रभाव उत्पन्न किए।

- इसने यूरोपीय देशों में पारस्परिक भय एवं संदेह का वातावरण उत्पन्न किया।
- सैनिक नीतियों पर अत्यधिक बल देने के कारण धीरे-धीरे नीति निर्माण का कार्य सिविल अधिकारियों के हाथ से फिसलकर सैनिक अधिकारियों के हाथों में चला गया।

Allied and Central Powers in Europe, World War I
Allied Power
Central Power
Neutral Nation
NORWAY
SWEDEN
DENMARK
North Sea
Baltic
IRELAND
GREAT BRITAIN
NETHERLANDS
GERMANY
BELGIUM
LUXEMBOURG
SWITZERLAND
AUSTRIA-HUNGARY
FRANCE
RUSSIA
ROMANIA
SERBIA
BULGARIA
Black Sea
ITALY
MONTENEGRO
ALBANIA
SPAIN
PORTUGAL
GREECE
OTTOMAN EMPIRE
Mediterranean Sea
AFRICA
ATLANTIC OCEAN
N
W
E
S
0 200 400 miles
0 200 400 kilometers
Robinson Projection

FINLAND
NORWAY
SWEDEN
ESTONIA
LATVIA
U.S.S.R.
DENMARK
LITHUANIA
EAST PRUSSIA
POLAND
GREAT BRITAIN
NETHERLANDS
GERMANY
BELGIUM
LUXEMBOURG
CZECHOSLOVAKIA
FRANCE
AUSTRIA
HUNGARY
RUMANIA
SWITZERLAND
ITALY
YUGOSLAVIA
BULGARIA
ALBANIA
TURKEY
GREECE

अध्याय 30

सोवियत संघ का विघटन

सोवियत रूस का विघटन विश्व इतिहास की एक युगान्तकारी घटना है। सोवियत रूस के विघटन के साथ उस दो-ध्रुवीय विश्व व्यवस्था का, जो 45 वर्ष पूर्व स्थापित हुई थी, अंत हो गया। वस्तुत: 1989-91 का वर्ष यूरोप में तीव्र परिवर्तन का काल था। इस काल में एक तरफ जहाँ पूर्वी यूरोप की समाजवादी सरकारों का पतन हो गया, वहीं स्वयं सोवियत संघ का भी अस्तित्व समाप्त हो गया। 1989 में जब फ्रांस की क्रांति की दूसरी शताब्दी मनायी जा रही थी, तभी यूरोप में एक नयी हलचल आरम्भ हो गई। 1989 के मध्य में गोर्बाचेव के अन्तर्गत प्रजातांत्रिक सुधारों पर आधारित सोवियत रूस की प्रथम संसद, 'कांग्रेस ऑफ पीपुल्स डिपुटीज' की बैठक आरम्भ हुई। आगे की घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि यह बैठक कुछ हद तक मई, 1789 में फ्रांस में आरम्भ एस्टेट्स जनरल की बैठक से समानता रखती थी। वर्षों से एक दलीय व्यवस्था के अन्तर्गत दबा हुआ समाज आंशिक प्रजातांत्रिकरण की इस पहली लहर को नहीं सह सका। आगे घटनाओं की एक शृंखला ने जन्म लिया तथा फिर अन्ततोगत्वा 1991 तक सोवियत रूस का विघटन हो गया।

सोवियत रूस के विघटन के कारण

अर्थव्यवस्था में गिरावट

विश्लेषण करने पर ऐसा ज्ञात होता है कि सोवियत रूस के विघटन के लिए एक से अधिक कारण उत्तरदायी थे, किन्तु निश्चय ही इसका एक महत्वपूर्ण कारण आर्थिक मोर्चे पर सोवियत रूस की विफलता रहा था। समस्या की जड़ में सोवियत रूस की नियंत्रित अर्थव्यवस्था थी। आरम्भ से ही सोवियत रूस ने विकास की एक नवीन रणनीति अपना ली थी। यह रणनीति थी निवेश (श्रम, पूँजी, कच्चे माल तथा ऊर्जा) में वृद्धि कर उत्पादन बढ़ाना। 1960 के दशक तक सोवियत रूस के विकास में यह फार्मूला अत्यधिक कारगर सिद्ध हुआ, किन्तु 1970 के दशक में इस पद्धति के आन्तरिक दोष स्पष्ट होने लगे क्योंकि निवेश पर आधारित उत्पादन मूल्य तथा गुणवत्ता दोनों ही दृष्टि से पूँजीवादी उत्पादन की तुलना में पीछे पड़ गया। अब तक सोवियत रूस विश्व का एक शक्तिशाली औद्योगिक देश रहा था किन्तु अब अन्तर्राष्ट्रीय मानदंड के अनुसार इसकी विकास दर अत्यधिक धीमी हो गयी थी। 1960 के दशक में सोवियत रूस की निर्यात की मदों में मुख्यत: मशीन, उपकरण, यातायात के साधन और धातु उपकरण शामिल थे। किन्तु 1985 में सोवियत रूस से निर्यात की जाने वाली मदों में 53 प्रतिशत ऊर्जा (तेल और गैस) शामिल थी। दूसरी तरफ इसकी आयातित वस्तुओं में 60 प्रतिशत अंशदान मशीनरी, धातु, औद्योगिक उत्पाद आदि का था।

वस्तुत: 1970 के दशक में होने वाले तेल संकट के पश्चात्, पेट्रोलियम की कीमत में भारी वृद्धि हुई तथा यह काले हीरे में तब्दील हो गया। अत: अब सोवियत रूस पेट्रोलियम तथा पेट्रोलियम उत्पाद के निर्यातक के रूप में बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित करने लगा। वस्तुत: 1929-30 की विश्व आर्थिक मंदी के काल में सोवियत रूस की सफलता का कारण रहा था सोवियत अर्थव्यवस्था का विश्व पूँजीवादी अर्थव्यवस्था से पृथक होना, किन्तु 1970 के दशक में सोवियत रूस की अर्थव्यवस्था विश्व अर्थव्यवस्था से जुड़ी हुई थी। अत: यह विश्व पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में होने वाले उतार-चढ़ाव से ग्रस्त हो गई। ऊर्जा-निर्यात से प्राप्त आसान विदेशी मुद्रा के कारण सोवियत रूस का ध्यान तकनीकी नवीनीकरण की ओर नहीं गया। व्यवहार में सोवियत रूस अधिक विकसित औद्योगिक अर्थव्यवस्था का ऊर्जा-निर्यातक बन गया। दूसरी तरफ ब्रेजनेव काल में विदेशी मुद्रा का एक बड़ा भाग सुरक्षा-व्यय के रूप में खर्च होने लगा।

शीत युद्ध के कारण भी सोवियत रूस की अर्थव्यवस्था पर अधिभार बढ़ता जा रहा था। प्रथम, संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ सैन्य क्षेत्र में अपनी बढ़त बनाए रखने के लिए इसे अपने स्रोत का एक बड़ा भाग सैनिक व्यय के रूप में खर्च करना होता था। दूसरे, तृतीय विश्व के देशों पर अपना प्रभाव क्षेत्र कायम रखने के लिए भी उसे अपने स्रोत का एक भाग निवेश, अनुदान तथा सैन्य सहायता के रूप में व्यय करना होता था। इस प्रकार सोवियत रूस की अर्थव्यवस्था पर सैनिक-कूटनीतिज्ञ कारकों के द्वारा प्रेरित अधिभार बढ़ता जा रहा था। फिर, अफगानिस्तान में सोवियत प्रवेश तथा द्वितीय शीतयुद्ध ने कुछ नवीन प्रकार की चुनौती उत्पन्न कर दी। यही समय था जब सोवियत रूस में गोर्बाचेव का उद्भव हुआ। गोर्बाचेव ने तात्कालिक आर्थिक समस्या के समाधान के लिए पेरेस्त्रोईका की नीति लायी, किन्तु आगे की घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि औषधि, रोग से भी अधिक घातक सिद्ध हुई।

तानाशाही के विरुद्ध व्यापक जन-असंतोष

सोवियत रूस के विघटन की व्याख्या में कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण

अध्याय 26

अफ्रीका और लैटिन अमेरिका विकास में बाधाएँ

जनजातीय संघर्ष की समस्या

20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में अफ्रीकी उपमहाद्वीप में उपनिवेश मुक्ति की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिला। किन्तु, स्वतंत्र होने के बावजूद में अफ्रीकी देशों में कुछ मूलभूत बाधायें बनी रहीं, जिन्होंने आगे के विकास को दुष्प्रभावित किया। अफ्रीकी देशों के विकास में एक मुख्य समस्या थी जनजातीय संघर्ष की समस्या। वस्तुत: प्रत्येक अफ्रीकी राष्ट्र विभिन्न जनजातीय वर्गों का समूह था। अत: विघटन के तत्व तो समाज के मूल में निहित था, परंतु औपनिवेशिक सरकारों ने विभिन्न जनजातीय समूहों पर बलपूर्वक नियंत्रण स्थापित कर कृत्रिम रुप में एकता बनाये रखी। फिर स्वतंत्रता आंदोलन के मध्य भी विभिन्न जनजातीय समूहों ने समन्वित रूप में संघर्ष किया क्योंकि वे एक ही आदर्श से प्रेरित थे। परंतु स्वतंत्रता के पश्चात् विघटनकारी प्रवृत्तियाँ तीव्र हो गई क्योंकि विभिन्न जनजातीय समूहों ने अपनी प्रारंभिक वफादारी अपने समूहों के प्रति अर्पित की, अपने राष्ट्र के प्रति नहीं। यही वजह है कि विभिन्न देशों में जनजातीय तनावों ने गृहयुद्ध का रूप ले लिया। उदाहरण के लिए, नाइजीरिया, कांगो, बुरुंडी आदि देशों में जनजातीय तनाव इतना तीव्र हो गया कि इसने गृहयुद्ध का रूप ले लिया।

राजनीतिक कारक

अफ्रीकी देशों के विकास में राजनीतिक कारक भी एक महत्वपूर्ण बाधक तत्व हैं। अफ्रीकी नेता प्रजातांत्रिक संस्थाओं के संचालन में प्रशिक्षित नहीं थे। अधिकतर अफ्रीकी सरकारें ज्वलंत समस्याओं का सामना करने में असमर्थ रहीं तथा उनका चरित्र अधिकाधिक भ्रष्ट होता चला गया। अधिकतर अफ्रीकी देशों में एकदलीय पद्धति कायम हो गई क्योंकि ऐसा माना जाने लगा कि एक राजनीतिक दल पर आधारित राज्य ही तात्कालिक आर्थिक-सामाजिक समस्याओं का उचित समाधान प्रस्तुत कर सकता था। राजनीतिक दृष्टि से अधिकतर अफ्रीकी देशों में अस्थिरता की स्थिति बनी रही। अपवाद में केन्या, तंजानिया जैसे देशों को लिया जा सकता है। जहाँ प्रजातांत्रिक एवं स्थिर सरकारें स्थापित हुई थीं। परंतु, उन देशों में भी जहाँ प्रजातांत्रिक सरकारें गठित हुई थीं, वहाँ भी अशांति एवं हिंसा एक सामान्य घटना बनकर रह गई एवं वैध तरीकों से उन सरकारों का विरोध संभव नहीं था। इसका स्वाभाविक दुष्परिणाम हुआ कि कुछ देशों में जहाँ प्रजातांत्रिक सरकारें स्थापित थीं, सैनिकों द्वारा सत्ता प्राप्त कर ली गईं और इस प्रकार एक तरह से तानाशाही व्यवस्था की शुरुआत हुई। कुल मिलाकर, यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक अस्थिरता भी अफ्रीकी देशों के विकास में एक महत्वपूर्ण बाधा बनकर उत्पन्न हुई।

आर्थिक कारक

अफ्रीकी देशों के विकास में निश्चय ही सबसे महत्वपूर्ण बाधा रही कुछ मूलभूत आर्थिक समस्यायें। मूल रूप से अफ्रीका एक कृषि प्रधान देश था जहाँ की 67 प्रतिशत जनसंख्या कृषि क्षेत्र में ही संलग्न थी। 1977 ई. में संपूर्ण अफ्रीकी महाद्वीप के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में कृषि का योगदान 30-40 प्रतिशत था। विश्व की 14 प्रतिशत कृष्य भूमि अफ्रीका में थी। विश्व का 26 प्रतिशत चारागाह अफ्रीका में था। फिर भी दु:ख की बात यह रही कि के कुल मूलभूत कृषि उत्पाद का मात्र 3 से 5 प्रतिशत अफ्रीका का उत्पाद रहा। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि अफ्रीका एक पिछड़ी हुई कृषि व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है।

खनिज उत्पादन की दृष्टि से अफ्रीका एक सम्पन्न क्षेत्र है। 1978 में पूँजीवादी देशों के कुल हीरे तथा प्लैटिनम उत्पाद का 97 प्रतिशत अफ्रीका में हुआ और कुल मिलाकर अफ्रीकी अर्थव्यवस्था में खान उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका रही। यह सकल घरेलू उत्पाद (GDP) का 12 प्रतिशत रहा, फिर भी आधारिक संरचना के विकास के अभाव में खान उद्योग का भरपूर विकास नहीं हो सका। जैसा कि हम जानते हैं कि अधिकतर अफ्रीकी देश मूलरूप में कृषि प्रधान ही बने रहे। केवल कुछ ही देश ऐसे थे जहाँ कृषि और उद्योग का समान रूप से महत्व रहा; यथा- मिस्र, अल्जीरिया, नाइजीरिया, मोरक्को, जाम्बिया आदि। एक मात्र दक्षिण अफ्रीका कृषि और उद्योग दोनों ही दृष्टि से विकसित था। अफ्रीका के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में केवल दक्षिण अफ्रीका का 21 प्रतिशत योगदान था। फिर भी अफ्रीका के औद्योगिक देश एक विशेष प्रकार की समस्या से ग्रस्त रहे और वह समस्या थी पूँजीवादी विश्व अर्थव्यवस्था पर अत्यधिक निर्भरता। इसने एक प्रकार का संरचनात्मक असंतुलन पैदा कर दिया तथा इसने एक विशेष प्रकार के आर्थिक संकट और सामाजिक विरोधाभास को जन्म दिया। अंतर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन ने,

DOWNLOAD APPLICATION

for

HISTORY OPTIONAL COURSE (UPSC/PCS)

Separate Batches for Both

HINDI AND ENGLISH MEDIUM

GET IT ON Google Play

Manikant Singh

App Features

- Complete History Optional Course (for both Medium)
- Weekly Live doubt classes
- Modules wise Courses Available
- Printed Study Material Sent to Home via Post
- Free Weekly/Monthly Test
- Free Demo Videos
- Daily Translated Article of The Hindu, Indian Express etc.

OUR BATCHES

- Offline Batch
- Online Live Batch
- Offline Video Course
- Recorded Classroom Course
- Pen Drive Course
- Answer Enrichment Course
- Annual Practice Test Series

To download Our Application

Our website QR Code

OUR MAINS TEST SERIES PROGRAMME

UPSC | UPPCS | BPSC

Follow us: YouTube

TS PUBLICATIONS

210, Virat Bhawan, IInd Floor, Near Post Office, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-9

: 9999516388, 8595638669

: info@thestudyias.net • thestudyias@gmail.com

ISBN: 978-81-957-117-0-3